जातपांत और अस्पृश्यता

रजि० नं० बी ४४४८
लाअिसेन्स नं० १५

हरिजनसेवक

दो आना

(संस्थापक : महात्मा गांधी)

भाग १९ — सम्पादक : मगनभाई प्रभुदास देसाई — अंक ३७

मुद्रक और प्रकाशक
जीवणजी डाह्याभाअी देसाअी
नवजीवन मुद्रणालय, अहमदाबाद–१४

अहमदाबाद, शनिवार, ता० १२ नवम्बर, १९५५

वार्षिक मूल्य देशमें रु० ६
विदेशमें रु० ८; शि० १४

दकियानूसीपन और नौजवानोंका विद्रोह

भावनगर राज्य (सौराष्ट्र)के भूतपूर्व दीवान श्री अे० पी० पट्टणी लिखते हैं :

"आपके ता० २२–१०–'५५ के अग्रलेख 'भय, असुरक्षितता और अनुशासनहीनता' के केन्द्रीय विचार पर गहरा ध्यान दिया जाना चाहिये। लेकिन शिक्षणके स्तरका पतन तो आजादीके पहले भी देखा गया था, जब देशके नौजवान अपने बड़े-बूढ़ोंकी तरह आजादीके आन्दोलनसे बाहर नहीं रह सके। अब अुस राष्ट्रीय मानसको शासन 'तोड़ने' में नहीं बल्कि अुसकी 'रचना और निर्माण' में लगना होगा। जब जीवनकी कपड़े, डॉक्टरी मदद, बाल-कटाअी या मकान जैसी जरूरत पूरी करनी होती है तब हम अपने जातिके केन्द्र या राजनीतिक केन्द्र पर नहीं जाते बल्कि दर्जी, डॉक्टर, नाअी या मकान बनानेवाले ठेकेदारके पास जाते हैं। अुसी तरह, शिक्षणके लिअे हमें शिक्षाशास्त्रियोंके पास जाना चाहिये। बेशक, हमारे बुजुर्गोंकी शिक्षण-पद्धति अपर्याप्त और अधूरी थी, कुछ हद तक गलत भी थी; परंतु वे कमसे कम कार्यक्षमता और अनुशासनके सिद्धान्तों पर अेकमत थे, और यह जानते थे कि वे क्या कर रहे हैं।

"युरोप, अमेरिका और रूस अपने बालकों और तरुणोंको आजकी और भविष्यकी जरूरतोंके लिअे शिक्षा देते हैं। हमें अभी यह सब करना है। अगर देशकी जनता और सरकार शिक्षणके विषयमें निष्णातोंकी सलाह लेनेको तैयार हों, जैसा कि वे अिंजीनियरी या अुद्योगोंके बारेमें करती हैं, तो हमारी पंचवर्षीय योजनायें और ज्यादा सफल होंगी।"

श्री पट्टणीके पत्र पर गहरा विचार किया जाना चाहिये। मैं आशा करता हूं कि वे यह नहीं सुझाना चाहते, जैसा कि कुछ अूपर अूपरसे घटनाओंका निरीक्षण करनेवाले कहते हैं, कि आजादीकी लड़ाअीमें विद्यार्थियोंने जो भाग लिया अुसके कारण शिक्षणका स्तर गिरा और विद्यार्थियोंमें अनुशासनहीनता फैली। अुस वक्त गांधीजीने विद्यार्थियोंको जो सलाह दी वह यह थी कि वे अंग्रेजी शिक्षण-संस्थाओंको छोड़ दें और स्वतंत्र राष्ट्रीय शिक्षण-संस्थाओंमें भरती हो जांय जो कि शिक्षाके क्षेत्रमें रचनात्मक कार्य करनेके लिअे शुरू की गअी थीं। जैसा कि हम जानते हैं, बहुत कम विद्यार्थी अुनमें भर्ती हुअे। यद्यपि अुस मौके पर तो जोशमें आकर बहुतसे विद्यार्थियोंने पुराने स्कूल-कालेज छोड़ दिये, लेकिन अेक सालके भीतर ही अधिकतर विद्यार्थी फिरसे अुनमें दाखिल हो गये। केवल थोड़ीसी राष्ट्रीय शिक्षण-संस्थायें जिन्दा रहीं, जिनमें विद्यार्थियोंकी बहुत थोड़ी संख्या थी। ये संस्थायें हमारे पूर्ण आदर और अभिनन्दनकी पात्र हैं। अुन्होंने नये या सच्चे राष्ट्रीय शिक्षणके प्रयोगोंके रूपमें अपना स्वतंत्र कार्य जारी रखा, जिसमें से शिक्षण-संबंधी कुछ नये विचारोंका जन्म हुआ। अुदाहरणके लिअे, शिक्षणका सच्चा माध्यम, पाठ्यक्रममें देशकी अेक सर्वसामान्य अथवा राष्ट्र-भाषाका स्थान जो अंग्रेजी नहीं बल्कि हिन्दी-हिन्दुस्तानी ही हो सकती है, अुद्योगकी तालीम और श्रम-प्रतिष्ठाकी स्थापनाकी आवश्यकता, मुख्यतः ग्रामीण भारत और अुसकी सच्ची आवश्यकताओंकी दृष्टिसे पाठ्यक्रमोंमें नया सुधार। ये अुन अनेक विचारोंमें से कुछ विचार हैं, जो शिक्षा-जगत्में राष्ट्रीय शिक्षणके स्वतंत्र प्रयोगके कारण अस्तित्वमें आये। अिन विचारोंने अंग्रेजी शिक्षणके स्वाभाविक गंभीर दोषोंको प्रकट कर दिया। अुस शिक्षणके कारण समाजमें पढ़े-लिखोंकी बेकारी तेजीसे फैलने लगी, अुसके विदेशी भाषाके माध्यमके कारण शिक्षण और परीक्षाओंका स्तर तेजीसे गिरने लगा तथा अिस बात पर विद्यार्थी-जगत्में पुण्यप्रकोप जाग अुठा कि शिक्षणके हो रहे ह्रासको रोकनेके लिअे लगभग कुछ नहीं किया जा रहा है। यह राष्ट्रीय शिक्षणका आन्दोलन विद्यार्थियोंकी संख्याकी दृष्टिसे तो सफल नहीं हुआ, परंतु भारतमें सार्वजनिक शिक्षणके नामसे पुकारी जानेवाली वस्तुके अशैक्षणिक और अराष्ट्रीय स्वरूपको जनताके सामने खोलनेमें वह बड़ा कारगर साबित हुआ। सरकारने शायद राजनीतिके स्पष्ट कारणोंसे अिसकी परवाह नहीं की और पुरानी पद्धतिसे ही शिक्षाका किसी तरह काम चलता रहा। हमारे भूतपूर्व शासकोंने राजनीतिक कारणोंसे शिक्षाके क्षेत्रमें पुराने ढर्रेको जो चलने दिया, वही मेरी रायमें शिक्षणके स्तरको घटानेके लिअे जिम्मेदार रहा। शिक्षणकी अुस सरकारी पद्धतिके पीछे अेक प्रकारका असत्य और अप्रामाणिकता छिपी हुअी दिखाअी देती थी। अुसने राष्ट्रनिर्माणकारी प्रवृत्तिके रूपमें अपनी प्रतिष्ठा खो दी और अिसके फलस्वरूप विदेशी शासक शिक्षणमें बैठी हुअी सड़ांधको दूर करनेकी दृष्टिसे कोअी ठोस काम नहीं कर सके। दरअसल यही चीज शिक्षणके स्तरको गिरानेमें कारण बनी, जो कम-अधिक रूपमें अभी तक जारी है।

अिसलिअे श्री पट्टणीका यह कहना सही है कि अब हमारे शासनका 'निर्माण करने' का समय आया है। विद्यार्थी-जगत्के लिअे अिसका अर्थ यह है कि वे अनुशासनका पालन करते हुअे अपने अध्ययनमें लग जायं। और विद्यार्थी अिस चीजको महसूस भी करते हैं। आवश्यकता अिस बातकी है कि जो शिक्षण अिस शताब्दीके ठेठ दूसरे दशकसे लेकर आज तक अुपेक्षित रहा है अुसके सुधार और पुनर्गठनकी स्पष्ट तसवीर खींची जाय और अुसके कार्यक्रम पर धीमी लेकिन निश्चित गतिसे अमल शुरू किया जाय। यहीं हमारे भूतपूर्व शासकों द्वारा चलाअी गअी राष्ट्रविरोधी शिक्षण-पद्धतिका पैदा किया हुआ दकियानूसीपन और स्थापित स्वार्थ हमारे सामने आते हैं, जो पुनर्गठनके काममें रोड़े

www.vinoba.in

अटकाते हैं और शिक्षणका माध्यम, बुनियादी तालीमका आरंभ, स्कूल-कॉलेजोंमें हिन्दीका शिक्षण जैसे आवश्यक सुधार और विकासकी ओर बढ़नेमें भी बाधा डालते हैं।

श्री पट्टणी अन्तमें सुझाते हैं कि बाहरसे निष्णात शिक्षा-शास्त्रियोंको सलाह-सूचनाके लिअे बुलाना चाहिये। लेकिन १९४७ से आज तक हमारे देशमें जो भी बड़ी बड़ी शिक्षा-विषयक जांचें हुअी हैं — जैसे युनिवर्सिटी कमीशन, माध्यमिक शिक्षा कमीशन, ग्रामीण क्षेत्रोंके लिअे अुच्च शिक्षण कमेटी वगैरा की — अुन सबमें हमने अैसा किया है। अिन सब कमीशनोंमें विदेशी निष्णात रहे हैं और अुनकी सलाह और सिफारिशें अिन कमीशनोंकी रिपोर्टोंमें आ गअी हैं। लेकिन पुराने दकियानूसीपनकी हमारे शिक्षा-जगत्में बड़ी प्रबलता है, और मुझे लगता है कि अिस क्षेत्रमें अेक नया अध्याय शुरू करनेका साहस और विश्वास हममें नहीं है। अिसलिअे केन्द्रीय और राज्य-सरकारें शिक्षणकी पुरानी व्यवस्था बदलनेमें भी घबराती और कांपती हैं। अिस क्षेत्रमें अेक प्रकारके छल-कपट और धोखेबाजीका ही बोलबाला मालूम होता है; हम अैसी बातें कहते हैं जिन पर या तो हमें सचमुच विश्वास नहीं होता या जिन पर अमल करनेका हमें साहस नहीं होता। अिससे शिक्षण-तंत्रमें संड़ाध पैदा होती है, जो समस्याओंको यहां-वहांसे हल करनेके अधूरे प्रयत्न करते हुअे बिना किसी ध्येयके यंत्रवत् काम करता रहता है। अगर अुसी पर समस्याओंको हल करनेका काम छोड़ दिया जाय तो सरकारी विभागका तंत्र होनेके कारण स्पष्ट ही वह अुन्हें हल नहीं कर सकता। अिसलिअे आजकी सारी परिस्थिति और नये युगका यह तक़ाजा है कि भारतके शिक्षण-संबंधी हमारे बुनियादी विचारों और दृष्टिमें क्रान्तिकारी सुधार हो। यह नये मूल्योंमें श्रद्धा और विश्वास तथा स्वतंत्र दृष्टिकी अपेक्षा रखता है, जो आजकी अिस क्रान्तिकारी मंजिलको सफलतासे पार करनेके लिअे जरूरी हैं। आज हम जो भय, असुरक्षितता और अनुशासनहीनता देखते हैं, वे अिस कठिन परिस्थितिके ही चिन्ह और लक्षण हैं, जो हमें समय रहते सावधान हो जानेकी चेतावनी दे रही है। शिक्षणके क्षेत्रमें पुराना दकियानूसीपन आज भी हमारे नेताओं और अिस क्षेत्रके कार्यकर्ताओंमें गहरी जड़ जमाये हुअे है, मुझे डर है कि अिसीने देशके नौजवानोंको प्राणघातक भूतकालके खिलाफ विद्रोह करनेके किनारे लाकर खड़ा कर दिया है।

३०-१०-'५५ मगनभाई देसाई

(अंग्रेजीसे)

शिक्षाकी समस्या

गांधीजी

कीमत ३-०-० डाकखर्च १-२-०

सच्ची शिक्षा

लेखक : गांधीजी; अनु० रामनारायण चौधरी

कीमत २-८-० डाकखर्च १-०-०

बुनियादी शिक्षा

गांधीजी

कीमत १-८-० डाकखर्च ०-६-०

विद्यार्थियोंसे

लेखक : गांधीजी; संपा० भारतन् कुमारप्पा

कीमत २-०-० डाकखर्च ०-१२-०

नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद-१४

खेतिहर मजदूरोंके बारेमें गिरि-कमेटीकी रिपोर्ट*

खेतिहर मजदूर भारतकी मजदूर-आबादीका सबसे बड़ा भाग हैं। वे हमारी कुल जन-संख्याका ७०% हैं। हमारी लगभग २५ करोड़ जनता अपनी जीविकाके लिअे खेती पर निर्भर करती है। दूसरी ओर, संघटित अुद्योगोंमें ज्यादासे ज्यादा २४ लाख मजदूर ही काम करते हैं। खेतिहर मजदूरोंकी संख्याकी तुलनामें औद्योगिक मजदूरोंकी संख्या मात्र ०.९८% ही है।

हमारे यहां संघटित अुद्योगोंमें काम करनेवाले मजदूरोंके लाभार्थ अुनकी दशामें सुधार करनेवाले और अुन्हें सुरक्षा प्रदान करनेवाले कअी कानून आज मौजूद हैं। लेकिन खेतिहर मजदूरोंकी हमारे यहां भयंकर अुपेक्षा हुअी है; यहां तक कि अुनकी आर्थिक दशासे संबंधित जरूरी पहलुओं पर हमारे पास कोअी पूरी जानकारी तक अुपलब्ध नहीं है।

खेतिहर मजदूरोंकी जांचके लिअे नियुक्त गिरि कमेटीने अब अपनी परिश्रमपूर्वक की गयी जांचकी अेक विस्तृत रिपोर्ट पेश की है, जो जनताके सामने अपने देशके अिस बृहत् समुदायकी आर्थिक हालतके विषयमें प्रामाणिक जानकारी अुपस्थित करती है। अिस रिपोर्टमें अनेक महत्त्वपूर्ण आंकड़े हैं जिनका हरअेक जिम्मेदार नागरिकको सावधानीसे अध्ययन करना चाहिये।

रिपोर्टमें संगृहीत कुछ दूसरे मुद्दे भी अुल्लेखनीय हैं :—

१. खेतिहर मजदूरी करनेवाले परिवारोंको वर्षमें केवल २१८ दिन काम मिलता है।

२. औसत वार्षिक आय प्रति परिवार ४४७ रु०, यानी प्रति व्यक्ति १०४ रु० है। संघटित अुद्योगोंमें काम करनेवाले मजदूरकी औसत वार्षिक आय ११११ रु० ८ आ० है। अुसकी तुलनामें खेतिहर मजदूरकी आय बहुत ही कम है।

३. खेती करनेवाले परिवारके औसत आवश्यक खर्च अिस प्रकार हैं :

अन्न	३९३	रु०
वस्त्र	२९	"
अींधन और प्रकाश	५	"
घर-भाड़ा और मरम्मत	४	"
दूसरोंसे ली गयी सेवाओंका तथा अन्य फुटकर खर्च	३०	"
सामाजिक तथा धार्मिक अवसर	७	"
कुल	४६८	रु०

अिससे स्पष्ट हो जाता है कि खेतिहर मजदूरोंके सारे परिवार आज अपनी आयकी सीमाके बाहर खर्च करते हैं। हर वर्ष अुन पर कर्ज चढ़ जाता है।

४. यह तो सबकी जानी हुअी दुःखद हकीकत है कि हमारे देहाती परिवारोंको समुचित प्रकारका भोजन नहीं मिलता। अिस प्रश्न पर रिपोर्टने अपनी जांचके परिणाम अिस तरह पेश किये हैं : "अिन मजदूरोंके भोजनका मुख्य अंश या तो भात है या गेहूं अथवा ज्वार-बाजरा या किसी अन्य स्थानीय अनाजकी रोटियां। अुसके साथ वे थोड़ीसी दाल या साग-भाजी और लेते हैं। नदी-तट-वाले प्रदेशोंमें कुछ मछली भी खाअी जाती है। दूध और दूधसे बने हुअे पदार्थोंका अुपयोग अुत्तर और अुत्तर-पश्चिम विभागके कुछ हिस्सोंको छोड़कर दूसरी जगहोंमें प्रायः नगण्य-सा है।"

अिसलिअे यह कहा जा सकता है कि खेतिहर मजदूर-परिवारके भोजन-बजटका ७९.२ प्रतिशत केवल गेहूं-चावल आदि खाद्यान्नों पर ही खर्च होता है। बाकी २०.८ प्रतिशत दूसरी चीजों पर खर्च होता है जिनमें मुख्य हैं दालें, मिर्च-मसाला और तेल। तेल पर भोजन-बजटका १०% खर्च होता है। गुड़, शक्कर, साग-भाजी, मांस, मछली और अंडों पर ५% खर्च होता है।

* अक्तूबर, १९५५ की 'ग्रामोद्योग पत्रिकासे'

www.vinoba.in

५. अिस कमेटीने खेतिहर मजदूर-परिवारोंके भोजनके पोषक तत्त्वोंका भी अध्ययन किया। वह अिस नतीजे पर पहुंची कि अुनका भोजन न तो हरअेक मनुष्यको भोजनसे जितनी अुष्णता मिलना चाहिये अुतनी अुष्णता ही दे सकता है और न अुसमें वे तत्त्व हैं जो मनुष्यके आरोग्यकी रक्षा करते हैं। रिपोर्टमें दिये गये ये तथा अैसे ही दूसरे तथ्य और आंकड़े अुसे अेक बहुमूल्य दस्तावेज बनाते हैं। सरकारको अुससे खेतिहर मजदूरोंकी अवस्थाकी काफी विस्तृत जानकारी प्राप्त हो गअी है; अब अुसे अुनकी अिस गंभीर हालतमें सुधार करनेके लिअे स्वेच्छापूर्वक शीघ्र ही कदम अुठाना चाहिये।

यह बताया गया है कि ५२ साप्ताहिक छुट्टियां और त्योहारोंकी १३ अतिरिक्त छुट्टियां अलग कर दी जायं तो हरअेक मजदूरको सालमें ८२ दिन अैसे मिलते हैं जब कि अुसे कोअी काम नहीं होता। यदि अुन्हें अिन ८२ दिनोंमें भी, खेतीमें अुन्हें जो मजदूरी मिलती है अुसीकी दर पर, काम देनेकी व्यवस्था कर दी जाय तो अुनमें से कअी आजके बनिस्बत ज्यादा अच्छे जीवन-मानका अुपभोग कर सकेंगे और कर्जके बोझसे भी मुक्त हो जायंगे।

(अंग्रेजीसे) अेम० व्ही०

हरिजन-सेवक-संघ

[सन् १९५४-५५ की रिपोर्टसे]

अस्पृश्यता-निवारण सरीखी सामाजिक क्रान्तिकी तुलनामें राजनैतिक क्रांति बल्कि आसान है। यह मानव-हृदयको छूनेका, हृदयको आन्दोलित और शुद्ध करनेका आन्दोलन है। अिस महा कठिन प्रश्नको हल करनेका प्रयास हरिजन-सेवक-संघ यथाप्राप्त साधनोंसे नम्रतापूर्वक गत २३ वर्षोंसे करता आ रहा है। अिसमें संदेह नहीं कि वातावरणमें कुछ फर्क अवश्य पड़ा है, पर अुतना नहीं कि जिस पर कुछ अधिक संतोष किया जा सके।

गत वर्षकी अपेक्षा अिस वर्ष कअी राज्योंमें अस्पृश्यता-निवारणका संघटित कार्य कुछ अधिक वेगसे हुआ। हरिजन-सेवकोंने कितने ही ग्रामोंमें घूम-घूमकर हरिजनोंके प्रश्नोंका अध्ययन किया, सवर्णोंसे सम्पर्क बढ़ाया और अस्पृश्यता-निवारणके बारेमें प्रेम और दलीलसे अुन्हें समझाया। तथा भारतीय संविधान और अस्पृश्यता-निवारण-कानून (१९५५) का भी आशय बताया।

यह खुशीकी बात है कि अस्पृश्यता किसी न किसी रूपमें पालन करनेवाले सनातनी भी अपने मतके समर्थनमें अब शास्त्रोंकी दुहाअी नहीं देते।

दुःख है कि अिस वर्ष भी अदालतकी निषेधाज्ञा जारी रहनेके कारण काशी-विश्वनाथके मंदिरमें हरिजनोंका प्रवेश नहीं हो सका। पर काशीके दूसरे कअी प्रसिद्ध मंदिरोंमें हरिजनोंने निर्विरोध दर्शन-पूजन किया। देशके अन्य अनेक भागोंमें मंदिर-प्रवेशका कायक्रम चला, जिसके परिणामस्वरूप कितने ही मंदिर हरिजनोंके लिअे खुल गये। किन्तु मध्यभारतके कअी जैन-मंदिरों पर हरिजन-दर्शनार्थियोंका प्रवेश रोकनेकी दृष्टिसे ताले तक डाल दिये गये, फिर भी जैन-मंदिर-प्रवेशका आन्दोलन बराबर शांतिपूर्वक चलता रहा। कअी जैन नवयुवकोंने अिस आन्दोलनका प्रत्यक्ष समर्थन किया, जिससे कअी स्थानों पर हरिजनोंने जैन-मंदिरोंमें प्रवेश किया।

कअी प्रदेशोंमें कार्यकर्ता-प्रशिक्षण-शिविर चलाये गये, जिनमें अस्पृश्यता-निवारणके प्रश्नों पर विस्तारपूर्वक चर्चा हुअी। ग्रामोंमें सैकड़ों सभाअें हुअीं। मेलों, प्रदर्शनों और सम्मेलनोंके आयोजन किये गये, और भजन-मंडलियोंने भी अस्पृश्यता-निवारणका प्रचार किया।

कअी स्थानों पर ग्रामों और नगरोंमें, छोटे-बड़े सहभोज हुअे, जिनमें सवर्णोंने हरिजनोंके हाथका परोसा हुआ भोजन बड़े प्रेमसे किया। कअी धार्मिक समारोहोंमें हरिजनोंके हाथसे प्रसाद भी ग्रहण किया गया।

अिस वर्ष भी मध्यभारत और राजस्थानके कुछ ग्रामोंमें विशेष प्रकारके और खास रंगके वस्त्र और चांदीके जेवर पहनने और विवाहके समय वरके घोड़े पर चढ़नेके मामले आये, जिन्हें संघके कार्यकर्ताओंने आपत्ति करनेवालोंको समझा-बुझाकर सुलझाया और अनुचित प्रतिबन्धोंको हटवाया।

अेक वर्षसे जोधपुर शहरमें हरिजन-सेवक-संघ जिस होटल-प्रवेश आन्दोलनको चला रहा था, वह शांतिपूर्वक सफल हुआ। जिस अेक होटल पर विवाद चल रहा था, अुसके मालिकने प्रेम-पूर्वक हरिजनोंको होटलके अन्दर जलपान कराया।

कुछ राज्योंमें, खासकरके तामिलनाड, आंध्र और मैसूरमें निर्योग्यता सम्बन्धी कुछ मामलोंको अदालतमें ले जाना पड़ा, जिनमें कअी अपराधियोंको जुर्मानेकी सजा दी गअी। अस्पृश्यता-निवारण-कार्यके प्रति सहानुभूति रखनेवाले सरकारी अधिकारियोंके प्रभावसे भी कअी जगह सफलता मिली।

हरिजन-कार्यके साथ-साथ संघके कितने ही कार्यकर्ताओंने भूदान-यज्ञके कार्यमें सहयोग दिया, जिससे कहीं-कहीं पर अेक तिहाअी ही नहीं, बल्कि ५० और ६० प्रतिशत तक भूमि हरिजनोंको वितरण द्वारा मिली।

केन्द्रीय सरकारसे प्राप्त विशिष्ट अनुदानोंसे अस्पृश्यता-निवारण-कार्यको अुत्तेजन और वेग मिला। अिस आयोजनके अन्तर्गत संघने विभिन्न राज्योंमें ५३ प्रार्थना-मंदिर तथा ५८ कुअें बनवाये।

संघके प्रधान मंत्रीने अुत्तरप्रदेश, बिहार, विन्ध्यप्रदेश, मध्यप्रदेश, बंगाल, अुड़ीसा, आंध्र, हैदराबाद, गुजरात और कच्छके दौरे किये।

विभिन्न प्रादेशिक रिपोर्टोंके अनुसार अिस वर्ष ६०१ सार्वजनिक कुअें, ५९९ मंदिर और ३९१ अुपाहारगृह व होटल हरिजनोंके लिअे खुले।

विविध प्रदेशोंमें हरिजन-सेवकोंने ५७७४ ग्रामोंमें प्रचार-कार्य किया, तथा १८४५ सभाओं व सम्मेलनोंके आयोजन किये।

नौ राज्योंमें १० कार्यकर्ता-प्रशिक्षण-शिविरोंके आयोजन किये गये तथा ८५ स्थानों पर सहभोज भी हुअे।

अिसमें संदेह नहीं कि हरिजनोंकी दुरवस्थाका अेक बड़ा कारण अुनकी भूमिहीनता है। अनुभव आया कि अुनके भूमिधर बन जाने और कुटीर अुद्योगोंको अुचित संरक्षण और प्रोत्साहन मिलनेसे ही आर्थिक अवस्थामें ठीक-ठीक सुधार हो सकता है। पर यह अितना बड़ा और व्यापक प्रश्न है, जिसे मुख्य रूपसे केन्द्रीय अेवं राज्य-सरकारें हल कर सकती हैं। अिस प्रश्नको अभी बहुत कम हाथ लगाया गया है। हरिजन-सेवक-संघ अपनी शक्ति और मर्यादाको देखते हुअे बहुत सीमित रूपमें अिस प्रश्नको हाथमें ले सका, और अुसे यत्किंचित् ही सफलता मिली। यह बहुत सन्तोषकी बात है कि भूमिदानमें मिली भूमि हरिजनोंको अेक तिहाअीसे भी अधिक कहीं-कहीं पर वितरित की गअी। विभिन्न प्रादेशिक संघोंके प्रयत्नसे कअी राज्य-सरकारोंने हरिजनोंको खेतीके लिअे तथा मकान बनानेके लिअे जमीनें दीं। अुनकी औद्योगिक अुन्नतिके लिअे भी साधारणसे प्रयत्न हुअे।

वियोगी हरि
प्रधान मंत्री

[जो लोग हरिजन-सेवक-संघके कार्यके बारेमें विस्तारसे जानना चाहते हों वे संघके मंत्रीको किंग्सवे, दिल्ली — ९ के पते पर लिख सकते हैं।

३१-१०-'५५ — म० प्र०]

www.vinoba.in

हरिजनसेवक

१२ नवम्बर १९५५

जातपांत और अस्पृश्यता

लगभग दो माह पूर्व चरोतरके अेक समाज-सुधारकने मुझे जो पत्र लिखा था, अुसे मैंने रख छोड़ा था। क्योंकि अुसमें जो प्रश्न अुठाया गया था, वह फुरसतसे विचारने जैसा मालूम हुआ था। अुन्होंने मुझे लिखा था:

"मैं अगस्त १९५५ के 'अखंडानन्द' मासिकमें छपे श्री परिव्राजकके 'जाति: जन्मसे या कर्मसे?' लेखकी ओर आपका ध्यान खींचता हूं।

"आज जब विचारशील और सयाने लोग यह स्वीकार करने लगे हैं कि जातियां भारतीय जनताके निर्माण और संगठनमें बाधक हैं, तब २२,००० ग्राहकोंवाले जनहितके लिअे निकल रहे 'अखंडानन्द' मासिकमें अैसा लेख छपते देखकर दुःख होता है, जो जन्मसे जातिको सिद्ध करनेका प्रयत्न करता है, जाति-व्यवस्थाको बढ़ावा देता है और साधारण जनताको भुलावेमें डालनेवाला है। अपने विचार प्रकट करनेका सबको अधिकार है, परंतु यह लेखक तो कुछ अैसी बातें कहता है जो छापने जैसी नहीं हैं। और यदि छपें तो अुनकी कड़ी टीका होनी चाहिये या अुस पर स्वतंत्र लेख लिखा जाना चाहिये।

"लेखके साररूपमें आखिरी चार पंक्तियां देखिये: 'अक्षरशिक्षणको तिलांजलि देना चाहिये। और प्रत्येक मनुष्यको अपने वर्गके धंधेमें लगना चाहिये। अैसा होगा तो ही आजकी भुखमरीका अन्त आयेगा।"

अिस पत्रको पढ़कर मैंने 'अखंडानन्द' में छपा लेख देखा। पत्रलेखककी शिकायत सही है। अिस लेखको पढ़कर अैसा लगता है कि शास्त्रोंका हवाला देकर वर्ण और जातिके बारेमें बात करनेमें अेक प्रकारका विचित्र अन्धानुकरण है। आजके युगमें, जब शास्त्रोंमें बताये गये वर्णाश्रम धर्मका लोप हो गया है, शास्त्रोंकी पुरानी भाषामें कही गअी बातका किसी तरह मेल ही नहीं बैठता। अैसी बात विचारोंको आगे नहीं बढ़ाती; वह विचारोंको चाहे अुलझाये नहीं परंतु अस्पष्ट तो हर हालतमें बनाती ही है।

आज हमारे सामने प्रश्न जातिको जन्म या कर्मसे माननेका नहीं है। जाति तो जन्मसे ही मानी जाती है। और अुसमें अेक प्रकारकी व्यावहारिक सुविधा भी है। परंतु प्रश्न यह है कि जातपांतको कायम रखा जाय या नहीं। क्योंकि अुसके पैदा किये हुअे जातिधर्म या रूढ़िधर्मके अनुसार अस्पृश्यता भी अुसका अेक भाग बनती है। और अस्पृश्यता सच्चे मानव-धर्मका द्रोह है। हिन्दू धर्म भी अुसे नहीं मानता। तब यह बुराअी अुसमें घुसी कैसे? अिस दृष्टिसे अुसका समर्थन करनेवाली जाति-प्रथा ही अेक प्रश्न बन जाती है।

अिस कारणसे और राजनीतिक कारणोंसे आज यह पुकार अुठाअी जा रही है कि जातिवादका नाश करो। परंतु अिसका अर्थ क्या, अिसके लिअे क्या किया जाय? अिन प्रश्नोंके अुत्तर पर शायद ही कभी गहरा विचार किया जाता है। चर्चाका विषय बने हुअे लेखमें अिस जीते-जागते प्रश्नका बिलकुल विचार नहीं किया गया है।

अिस संबंधमें पहली बात हमें यह समझ लेनी है कि वर्ण और जातिके बीच भेद किया जाना चाहिये। वर्ण चार हैं — ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र। अस्पृश्य कही जानेवाली जातियोंकी गणना अिन चार वर्णोंमें न होनेसे वे 'पंचम' वर्ण कहलाअीं। अिन चार वर्णोंमें से अेकमें भी हरिजनोंकी गिनती न करनेका कारण शायद यह हो कि अुन्हें अस्पृश्य माना गया था, जब कि चार वर्ण आपसमें स्पृश्य माने गये थे। अिसके सिवा, जड़में जाकर देखा जाय तो वर्ण-व्यवस्थामें अूंचनीच भाव नहीं दिखाअी देता। गुण-कर्मके अनुसार वर्ण भी बदला जा सकता था, यद्यपि साधारण व्यवहारमें निर्णय तो जन्मसे ही लिया जाता था।

दूसरी ओर जाति-व्यवस्थामें 'हरिजनों' का स्थान देखें तो जातियोंके रूपमें ही अुनकी गिनती होती है। समाजमें अनेक जातियां हैं और अुनके बीच अूंचनीच भाव देखनेमें आता है। वह भाव हरिजनोंकी जातियोंमें पहुंचकर अस्पृश्यताकी बुराअीकी हद तक चला गया है।

अिस तरह जाति और वर्णके बीच यह अेक भेद है। परंतु अिस परसे मैं यह नहीं कहना चाहता कि ये दोनों बिलकुल भिन्न प्रकारकी अलग वस्तुअें हैं। दोनोंकी जड़में अेक समान विचार मालूम होता है। वह यह कि ये दोनों संस्थायें समाजके धारण-पोषणके लिअे आवश्यक धंधोंके विभाग करनेवाली संस्थायें हैं। अिसलिअे दरअसल यह कहना चाहिये कि पुरानी वर्ण-व्यवस्था धीरे-धीरे भ्रष्ट होती गअी और आज अुसने जातियोंका रूप ले लिया है। अिस भ्रष्टताके समयमें कभी न कभी कुछ वर्ग या तो अपने धंधेके कारण या और किसी कारणसे अस्पृश्य माने जाने लगे और अुनकी जातियां अलग हो गअीं। यह भी हो सकता है कि किसी प्रतिलोम विवाह-प्रथासे पैदा हुअी वर्णसंकरताको दूर करनेके लिअे नया वर्ग बना हो और अुस समयके समाजमें अुसके हिस्से जो काम आया अुसमें अुसे लगना पड़ा हो। परंतु यह निरी कल्पना ही कही जायगी। सत्य क्या है यह निश्चित रूपसे कहना असंभव है, अैसा मानना ही ठीक होगा।

जाति-प्रथामें अूंचनीच भाव और अस्पृश्यताकी जो बुराअी घुसी वह अुसका छोड़ने लायक अंग है; लेकिन अुसमें धंधोंके आधार पर समाजका जो विभाजन हुआ वह छोड़ने जैसा नहीं माना जायगा। अुसमें अेक सुविधा यह थी कि समाजमें बड़ा होकर किसी मनुष्यको धंधेकी खोज नहीं करनी पड़ती थी। आम तौर पर लड़का माता-पिताका धंधा ही अपनाता था और अुस धंधेकी तालीम अुसे अपने-आप घर पर ही मिल जाती थी। परंतु आजके जमानेमें यह चीज शायद सुविधा नहीं बल्कि बन्धन मानी जायगी। क्योंकि पुराने जमानेके अूंच-नीचपनसे घबराकर आज हम सबकी समानता चाहते हैं। हम चाहते हैं कि जिसे जो धंधा करना हो वह करनेकी अुसे आजादी होनी चाहिये। परंतु अिसके फलस्वरूप समाजमें परस्पर होड़, अीर्ष्या और द्वेष पैदा होता है। साफ है कि शिक्षितोंकी बेकारी जैसे दोष अिस नअी विचारसरणीके ही फल हैं। और जातिवाद भी अिसी भावनाका परिणाम है। व्यक्तियोंकी तरह जातियां भी आपसमें होड़ करती हैं, क्योंकि अुनका धंधावार कोअी काम नहीं रहा। सब लोग समान रूपसे आगे बढ़ना चाहते हैं। समानताके नाम पर पिछड़ी मानी जानेवाली जातियां अूंचे दर्जे और नौकरियों वगैराकी मांग करती हैं — योग्यता कुछ कम हो तो अुसे नजरअन्दाज करके भी!

गहरे जाकर देखें तो अैसा लगता है कि हमारे समाजमें अेक भारी गांठ पैदा हो गअी है। वह गांठ यह है कि पश्चिमके संसर्गसे हमारे यहां आये हुअे लोकशाहीके नये विचारोंका मेल वर्ण और जातिके विचारोंवाले पुराने लोकाचारके साथ बैठेगा या नहीं। अिसी कारणसे आज यह विचार-मन्थन पैदा हुआ है। शहरोंमें रहनेवाली जनताकी यह स्थिति है। परंतु हमारा बड़ा जनसमुदाय यानी हमारी गांवोंकी विशाल जनता तो अिन नये विचारोंसे अछूती-सी रही है और वह आज भी जातपांत और अस्पृश्यताके रूढ़िधर्ममें जकड़ी हुअी है। अिस स्थितिको सुधारनेके

www.vinoba.in

लिअे क्या किया जाय, यह बड़ा प्रश्न केवल समाज-सुधारकोंका ही नहीं, बल्कि राज्य-सुधारकों और लोकशिक्षकोंका भी है।

अिस प्रश्नका स्वरूप स्पष्ट समझे बिना अिसका हल नहीं मिल सकेगा। शास्त्रोंकी पुरानी परिभाषा अिसमें हमारी बहुत मदद नहीं कर सकेगी। परंतु जिसे अुन्होंने सनातन सत्यके रूपमें माना है, वह समाजकी वर्णाश्रम व्यवस्था तो हमारे सामाजिक मानसमें अंकित हो गअी है। क्योंकि अितना निश्चित है कि हमारे समाजकी रचना वर्णधर्मके पीछे रहे मूल तत्त्वके दर्शनके आधार पर हुअी है और अुसीके आधार पर समाज चला है। अिसके साथ यह भी सच है कि अुस तत्त्वका अर्थ भ्रष्ट हो जानेके कारण आज जातिवाद और अस्पृश्यताकी बुराअी खड़ी हुअी है जिसे सुधारना चाहिये। सच्ची वर्ण-व्यवस्थामें यह बुराअी नहीं है। अुसमें अेक प्रकारकी लोकतांत्रिक दृष्टि है; परंतु जिस प्रकार लोकशाहीमें हमेशा सजग रहकर समानताकी आराधना करनी पड़ती है, अुसी प्रकार सच्चे वर्णधर्मका पालन करनेके लिअे भी अूंचनीच भावके खिलाफ हमेशा सजग रहना चाहिये। रूढ़िधर्म अिस चीजको समझे और अुसके अनुसार अपना नवसंस्करण करे, अैसा प्रयत्न करनेकी जिम्मेदारी हिन्दू समाजको अपने सिर लेनी है। आज यही प्रश्न हमारे सामने है।

२-११-'५५ मगनभाअी देसाअी

(गुजरातीसे)

साधुचरित जाजूजी

'मूक सेवक' के यशको हम दुर्लभ मानते हैं। अिस यशके कोअी अक्षरशः योग्य हों तो वह मेरे जाने हुअे अखिल भारतीय नेताओंमें श्री जाजूजी ही हो सकते हैं। सार्वजनिक सेवकोंमें कीर्तिकी वासना बड़ी खाअीका काम करती है। लेकिन जाजूजीने अिस खाअीको पार कर लिया था। वे नैष्ठिक मानव-सेवक थे। पाठक जानते होंगे कि कुछ दिन पहले जयपुरके दवाखानेमें अचानक अुनका देहान्त हो गया। अुन्हें हर्नियाका रोग था। डॉक्टर अुनसे कहते थे कि यदि कामका बोझ हलका करके आप प्रवास कम कर दें तो आपरेशन नहीं कराना पड़ेगा, वर्ना आपरेशन करा लेना ही ठीक होगा। अिसलिअे किसी कामसे जयपुर जाने पर वहीं अिस कामसे भी निबट लेनेका अुन्होंने निश्चय किया था। आपरेशन तो अच्छी तरह हो गया, लेकिन कुछ दिन बाद अचानक अुनका स्वर्गवास हो गया!

वे वकालतका धंधा करते थे। लेकिन १९२० में अनेक लोगोंने वकालत छोड़ी, अुसी तरह अुन्होंने भी सदाके लिअे अुसे तिलांजलि दे दी। स्व० जमनालालजी अुन्हें अपने पूज्य बुजुर्ग मानते थे। हर काममें न सिर्फ अुनकी सलाह लेते, बल्कि वे जो कहते अुसे आज्ञा मानकर चलते थे। यह दुर्लभ आदर अुन्हें अपने चरित्रबल, परिपक्व बुद्धि, धर्मपूत व्यवहार-दक्षता, सयानपन तथा पवित्रताके गुणोंके कारण प्राप्त हुआ था।

मैंने पहले-पहल अुन्हें १९३४ में देखा था। १९३० में गांधीजीने साबरमती आश्रमका त्याग किया और १९३४ से वर्धाको अपना निवासस्थान बनाया। वहां जमनालालजी बरसोंसे सत्याग्रह आश्रमकी शाखा जैसी अेक संस्था चलाते थे। विनोबा अुसके अध्यक्ष थे। १९३४ में गांधीजीने वर्धाकी अुसी संस्था — आश्रममें रहना शुरू किया था। अुसके बाद जैसे-जैसे कामका विकास होता गया, वैसे-वैसे क्रमसे मगनवाड़ी और अुसके बाद सेवाग्राममें अुनका जंगम आश्रम घूमता रहा।

१९३४ में जब गूजरात विद्यापीठ सरकारके कब्जेमें था, तब मेरा वर्धा जाना हुआ था। गांधीजीने वहांकी महिलाश्रम नामक संस्थाका काम संभालनेकी जिम्मेदारी मुझे सौंपी थी, अिसलिअे मैं वहां गया था। तब मैंने देखा कि गांधीजीके निवासके कारण राष्ट्रीय कार्योंका धाम बना हुआ वर्धा यानी जमनालालजी और जमनालालजी यानी गांधीजीका वर्धा या अुनका परिवार। अुसके बाहरका वर्धा गांव बिलकुल अलग और पराया मालूम होता था। परंतु जमनालालजीका वर्धा अपने-आपमें अेक छोटीसी सृष्टि ही था। सारे कार्यकर्ता अुसमें रचेपचे रहते थे। अुनके लिअे मानो बाहरके वर्धाकी सृष्टि थी ही नहीं।

सारे रचनात्मक कार्य वर्धामें चलने चाहिये; अिसके लिअे योग्य मनुष्योंको लाकर यहीं बसाना चाहिये; और बापू अुस वातावरणमें रहकर वर्धाको देशका राष्ट्रीय सेवाका केन्द्र बनावें; — यह श्री जमनालालजीका स्वप्न था। अुन्होंने अपना सर्वस्व निछावर करके यह स्वप्न बड़ी हद तक सिद्ध किया था। अुस समयका वर्धा देशकी राष्ट्रीय राजधानी बन गया था।

अिस सारी राष्ट्रीय कार्य-सृष्टिके अनेक केन्द्र थे। बापू तो अुसके अेक अनोखे केन्द्र थे ही। लेकिन वे केवल वर्धाके ही नहीं माने जा सकते थे। वर्धाकी रचनाकार्य-रूपी बाड़ीकी दृष्टिसे केन्द्र माने जाने लायक थे श्री विनोबा और श्री किशोरलालभाअी। वर्धामें अनेक संस्थायें चलती थीं, जिनके सेवक आध्यात्मिक और नैतिक चर्चा तथा विचारके लिअे अिन दो आचार्योंके पास जाते थे। परंतु मैंने देखा कि संचालनकी दृष्टिसे अिन सब संस्थाओंके पीछे जाजूजी ही थे। अिसका कारण मैंने स्पष्ट समझ लिया। आदर्शके कल्पना-विहारसे काम नहीं होता; कभी कभी अुससे काम तो अेक ओर रह जाता है और व्यर्थकी भावुकतापूर्ण या तात्त्विक चर्चायें चला करती हैं। वर्धामें अैसा ही देखनेमें आता था। जाजूजीकी प्रतिभा अिसमें अलग पड़ती थी। वे कार्यमें अुतारनेकी दृष्टिसे तत्त्व और नीतिके मुद्दोंका अच्छी तरह विचार करते थे। अिसके लिअे आवश्यक चर्चा वे विनोबा और किशोरलालभाअी वगैराके साथ करते थे। बापूजी बहुत बार कहा करते थे कि जो धर्म व्यवहारमें न अुतारा जा सके अुसे समझने या अुसका मूल्य आंकनेमें कहीं भूल होनी चाहिये। अिस सूत्रको मैंने जाजूजीकी कार्यपद्धतिमें भलीभांति अुतरा हुआ देखा। अिसी कारणसे वे जमनालालजीके सारे कार्योंमें प्रमुख सलाहकार और नीति-तथा-मार्गदर्शक बन गये थे। अिसके मूलमें अुनकी अनुभवनिष्ठ बुद्धिशक्ति, नीतिपूत व्यवहारदक्षता और पूर्णशुद्ध देशभक्ति थी। जीवनमें अुनकी मूल प्रेरणा धर्म और मोक्षकी थी। वे साधुचरित थे, अिसीलिअे वे अपना सब-कुछ छोड़कर गांधीजीके कार्योंमें लग गये थे। वे विनोबा और किशोरलालभाअीके भक्त थे। अुमरमें बड़े होते हुअे भी वे अिन दोनोंका खूब आदर करते थे, क्योंकि अिन्हें वे अपनेसे बड़े साधक मानते थे और अुस रूपमें अुन्हें पूजते थे।

जाजूजीकी कार्यदक्षता और परिपक्व बुद्धि पर गांधीजीको अपार श्रद्धा थी। वर्धाके किसी भी कामके बारेमें जाजूजी क्या कहते हैं यह जाने बिना वे स्वयं कुछ नहीं कहते थे। अुनकी राय और दृष्टिके लिअे गांधीजीके मनमें बड़ा आदर था। कितनी ही बार वे कहते थे कि जाजूजीसे पूछा लेना, फिर मुझे मत पूछना। जाजूजी किसी बातमें कुछ कहनेकी जरूरत पैदा होने पर अुसका मूल्य खुद आंकते तथा अुसके लिअे जिन जिनसे मिलना आवश्यक होता अुनसे मिलते थे अुनमें बापूजी आ जाते थे। वे अैसा करते अिसीलिअे बापूजी निश्चिंत रहते थे कि किसी कामके बारेमें जाजूजीको विचार-विमर्श करना होगा तो कर लेनेके बाद ही वे अपनी सलाह देंगे। चरखा-संघका सारा काम तो अुन्होंने जाजूजी पर ही छोड़ दिया था।

जाजूजीमें दूसरी अेक बात जो मैंने देखी वह अुनकी नम्रता और मितभाषिता थी। समयका अुपयोग बापूजीकी तरह सावधानी और सख्तीसे करनेवाले मैंने बहुत कम लोग देखे हैं। अैसे दो व्यक्ति मैंने देखे हैं — अेक स्व० मगनलाल गांधी और दूसरे जाजूजी। अिस कारणसे जाजूजी गांधीजीके सारे रचनात्मक कार्योंका

www.vinoba.in

चिन्तन कर सकते थे और अुनके संचालनमें भी मदद करते थे। अिस प्रकार वे संपूर्ण राष्ट्रके अखिल भारतीय सेवक थे। यह नहीं कहा जा सकता कि वे राजनीतिकी गतिको नहीं जानते थे। आजादीकी हर लड़ाअीमें वे जेल गये थे। परंतु यह सच है कि पार्लमेन्टरी कामोंमें पड़नेकी अुन्होंने कभी अिच्छा नहीं की। मध्यप्रदेशका शासनतंत्र संभालनेकी जिम्मेदारी अुन पर डालनेकी बात सोची गअी थी। देशका अर्थतंत्र संभालनेकी बुद्धि-शक्ति और सूक्ष्म दृष्टि भी अुनमें थी। परंतु अुन्होंने अिस दिशामें कोअी अुत्साह नहीं दिखाया। वे जीवनके अन्त तक गोसेवा, खादी आदि कामोंमें ही लगे रहे। बापूजीके निर्वाणके बाद अुन्होंने सर्व-सेवा-संघ और भूदानमें अपनी शक्ति और समय लगाया। सत्तरके आसपास अुमर होते हुअे भी वे अिन कामोंमें पड़े। अुसमें खास ध्यान अुन्होंने संपत्तिदान पर दिया। अुसी कामके लिअे वे राजस्थान गये थे और वहीं अुनका स्वर्गवास हो गया। अिस शान्त, साधुचरित और पवित्र राष्ट्रसेवकको मैं अपनी नम्र श्रद्धांजलि अर्पण करता हूं। अुनके चले जानेसे गांधीजीके कार्य करनेवाले परिवारको जो क्षति पहुंची है, अुसकी पूर्ति विद्यमान लोगोंमें से कोअी कर नहीं सकेगा। गांधीजीके विरल साथी श्री जाजूजीको मेरा नम्र प्रणाम।

३१–१०–'५५ **मगनभाई देसाई**
(गुजरातीसे)

हिन्दी परीक्षाओंका परिणाम

गूजरात विद्यापीठ, अहमदाबादकी ओरसे ३, ४ सितम्बर, १९५५ को ली गअी हिन्दी पहली, दूसरी, तीसरी और विनीत परीक्षाओंमें बैठे और अुत्तीर्ण हुअे परीक्षार्थियोंकी संख्या नीचे दी गअी है :

परीक्षा	कुल अर्जियां	कुल बैठे	कुल पास	फीसदी परिणाम
पहली	११७६३	१०९७५	७१०६	६४.७%
दूसरी	१५३१५	१३८६९	९६०२	६९.२%
तीसरी	८१८७	६८४८	३२७१	४७.७%
विनीत	४९४८	३७७७	१२२४	३२.४%
कुल	४०२१३	३५४६९	२१२०३	

सामान्य अिनाम पानेवाले

पहली

क्रम	केन्द्र	नंबर	नाम	१०० में से मिले हुअे अंक
१.	घंधुका	७८०	श्री किरीट कान्तिलाल वासणावाला	८६
२.	रणुंज	६८८२	श्री अमृतलाल कस्तूरचंद शाह	८५

दूसरी

				१०० में से मिले हुअे अंक
१.	गोधरा	६३७	श्री अुर्मिला मूलजीभाअी शाह	८३
२.	सूरत	१४२५९	श्री भाणाभाअी खुशालभाअी मकवाणा	८२

तीसरी

				२०० में से मिले हुअे अंक
१.	अहमदाबाद	३६३	श्री पद्मनाभ गोपालकृष्ण करंजी	१४३
२.	अहमदाबाद	१६	श्री अीश्वरलाल केशवलाल गदाणी	१३६

विनीत

				३५० में से मिले हुअे अंक
१.	पालणपुर	१७५६	श्री रमणलाल माणेकलाल शाह	१९०
२.	राजकोट	४६७५	श्री मथुराप्रसाद नारणदास धनेशा	१८१

अिनाम पानेवाले विद्यार्थियोंको बादमें खबर दी जायगी।

गूजरात विद्यापीठ, **गिरिराजकिशोर**
अहमदाबाद – १४ परीक्षामंत्री
ता० ५–११–'५५

घानीकी शक्ति

दुनियामें ३५० लाख टन तिलहनका अुत्पादन होता है। भारतमें अिसका सातवां हिस्सा पैदा होता है। अिनमें से खानेका तेल ११ लाख टन होता है। प्रतिदिन फी आदमी ०.३ औंस तेलकी औसत आती है जब कि आहारशास्त्रकी दृष्टिसे हर आदमीको प्रतिदिन दो औंस लेना चाहिये। अिस परिस्थितिको देखते हुअे खाद्य तेलोंकी पैदाअिश बढ़ानी चाहिये। अुनका दूसरे कामोंके लिअे किया जानेवाला अुपयोग बंद होना चाहिये। और नीम, कंजी, महुआ आदिके बीजोंके अखाद्य तेलोंका अुपयोग औद्योगिक कामोंके लिअे बढ़ाया जाना चाहिये।

सन् १९५३-५४ में भारतमें ३७.१० लाख टन तिलहन पेरा गया। २३.६८ लाख टन मिलोंमें और १३.४२ लाख टन घानियोंमें। अिस तरह मिलोंका हिस्सा ६४% और घानियोंका ३६% था। अिसे बदलनेकी जरूरत है। देशमें घानियोंकी संख्या अुत्तरोत्तर घटती जा रही है। सन् १९२१ में सारे देशमें ५ लाख घानियां थीं। सन् १९५१ में वे घटकर २ लाख ही रह गयीं। अिस तरह तीस वर्षमें ३ लाख घानीवालोंको रोजी मिलना बंद हो गया। अिस दरमियान तेलकी मिलोंमें केवल ४५,००० मजदूरोंको काम मिला। सब मिलाकर घानियां तो ४,४६,००० हैं, अैसी गिनती लगायी गयी है लेकिन अुनमें से केवल आधी ही चालू स्थितिमें हैं। जिन घानियोंको काम नहीं मिल रहा है, अुन्हें काम मिलना शुरू हो जाय तो घानियोंसे ज्यादा तेल पेरा जा सकेगा। अिस तरह लोगोंको शुद्ध तेल मिलेगा और घानीवालोंको रोजी मिलेगी। नयी पंचवर्षीय योजनामें घानियोंका अुपयोग बढ़ाकर लोगोंको रोजी देनेके लिअे ग्रामोद्योग बोर्डने नीचे लिखे अर्थकी सूचनायें की हैं :

१. चालू मिलोंमें २६.६८ लाख टनसे ज्यादा तिलहन पेरनेकी अिजाजत न दी जाय; और अुसी तरह तेलकी नयी मिलें खड़ी करनेकी अिजाजत भी न दी जाय।

२. कौनसी तिलहन मिलोंमें, और कौनसी घानियोंमें पेरी जाय, यह बात निश्चित कर देना चाहिये और मिलोंको वर्षमें १० लाख टन बिनौला पेरनेके लिअे कहना चाहिये।

३. तिलहनके निकास पर अंकुश डालना चाहिये।

४. घानीके तेल-अुद्योगको अुत्तेजन देनेके लिअे मिलके तेल पर प्रतिमन रु० १–४–० (टन पर ३५ रु०) के हिसाबसे सेस लगाना चाहिये।

५. मिलमें ४०% तेल निकलता है जब कि चालू घानियोंमें ३५ से ३६% तक ही निकलता है। लेकिन सुधारी हुअी वर्धा घानीमें ४०% तेल निकल सकता है। अिसलिअे पुरानी घानियोंमें से अगले पांच वर्ष में ५०००० घानियोंको वर्धा घानीमें बदल देना चाहिये।

६. देशके विभिन्न हिस्सोंमें घानीके ४०० आदर्श केन्द्र खोलना चाहिये।

७. मिस्त्रियों, निरीक्षकों और तेलियोंको तालीम देनेके लिअे १३ तालीम केन्द्र खोलना चाहिये।

८. घानीके तेलकी कीमतमें राहत देनेके लिअे प्रति मन रु० २–८–० की मदद देना चाहिये।

९. घानी और अुसके साधन खरीदनेके लिअे तथा तिलहनका स्टाक करनेके लिअे घानीवालोंको कर्ज देनेकी व्यवस्था होना चाहिये और अुसके तेलकी बिक्रीकी व्यवस्था भी होना चाहिये। अिस अुद्देश्यसे सहकारी मण्डलियोंका विकास किया जाना चाहिये।

अैसे विविध कदम अुठाये जायं तो घानियोंसे १९६०-६१ में ४,६६,००० टन तेल पैदा होगा और ८,५४,००० टन खली पैदा होगी। अुनसे २ लाख घानीवालोंको काम मिलेगा। अिस कार्यमें

www.vinoba.in

कुल मिलाकर घानीवालोंको दिये जानेवाले कर्ज पर ९५० लाख रुपये और चालू खर्चके लिअे ८८८ लाख रुपये जरूरी होंगे।

घानीके जरिये लोगोंको घर बैठे रोजी देनेके लिअे और आहारकी दृष्टिसे शुद्ध तेल पैदा करनेके लिअे घानीकी शक्तिका अूपर बताये अनुसार अुपयोग होना चाहिये।

(गुजरातीसे) वि०

कल्याण-राज्य बनाम सर्वोदय-राज्य

२

कल्याण-राज्यके विचारका आरंभ

राज्यको प्रजाके अधिक कमजोर वर्गोंके अुद्धारका काम हाथमें लेकर अुन्हें मदद करनी चाहिये — यह विचार कोअी नया नहीं है। हम जानते हैं कि गरीब-वर्गोंको राहत पहुंचानेके लिअे चर्च, 'गिल्ड' अथवा खानगी लोगोंकी मंडलियों जैसे कोअी न कोअी संगठन या संस्थायें हमेशासे समाजमें काम करती आअी हैं। जब अिस समस्याको हल करने और बढ़ते हुअे समाजकी जरूरतें पूरी करनेके लिअे अिस तरहके संगठन और संस्थायें अपर्याप्त मालूम हुअीं, तब राज्यको आगे आकर गरीबोंकी मदद करनेकी जिम्मेदारी अपने सिर लेनी पड़ी। महारानी अेलिजाबेथ प्रथमके मातहत अिंग्लैण्डमें हुआ 'पूअर लॉ रिफार्म' (गरीबों सम्बन्धी कानूनमें सुधार) अिसीका अेक अुदाहरण कहा जायगा।

पूंजीवादकी असफलता

लेकिन अिस अर्थमें कल्याण-राज्यके विचारका आरंभ कि जरूरतमन्द और गरीब लोगोंको राज्यकी मदद, बिना किसी प्रकारके कलंकके, अधिकारके तौर पर मिलनी चाहिये न कि दानके तौर पर, बिलकुल हालकी अुपज है। और जब सर्वतोमुखी अुन्नतिके अेक साधनके रूपमें पूंजीवादके विकाससे पैदा होनेवाली आशायें पूरी नहीं हुअीं और सुन्दर व सुखद कल्पनासे अधिक कुछ सिद्ध नहीं हुअी तब कल्याण-राज्यके अिस विचारका विकास हुआ। शुरूके अर्थशास्त्रियोंकी ये आशायें पूंजीवादकी पद्धतिके प्रत्यक्ष कार्यसे झूठी सिद्ध हुअीं कि पूंजीवादके मातहत विकासकी प्रक्रिया अपने-आप निरंतर गतिसे आगे बढ़ेगी। अिंग्लैण्डकी चरम समृद्धिके दिनोंमें भी, जो स्वतंत्र अुद्योगोंका जमाना था, अुसकी आबादीके दस आदमियोंमें अेक आदमी कंगाल ही था।* सम्पत्तिके अुत्पादनमें हुअी बड़ी वृद्धिसे बहुत बड़े भागके लोगोंके कल्याणमें कोअी वृद्धि नहीं हुअी। अिसके खिलाफ, सम्पत्तिके अुत्पादनमें जो भारी वृद्धि हुअी, अुसका अधिकतर लाभ आबादीके केवल अिनेगिने लोगोंको मिला, जिनका अुत्पादनके साधनों पर नियंत्रण था। चूंकि किसी अुद्योग-धन्धेमें पूंजी लगानेका मुख्य अुद्देश्य नफा कमाना था और समाजकी जरूरतों या आर्थिक न्यायसे अुसका कोअी वास्ता नहीं था, अिसलिअे सम्पत्तिका अुत्पादन व्यवस्थित और योजनाबद्ध ढंगसे नहीं किया जा सका। समय समय पर भावोंमें आनेवाले अुतार-चढ़ाव, जिन्हें अर्थशास्त्री दूसरे शब्दोंमें 'व्यापारिक चक्र' कहते हैं, पूंजीवादके मातहत नियमित और अनिवार्य मान लिये गये, जो मालकी तंगी पैदा करते, आर्थिक प्रवृत्तियोंको घटा देते और बेकारी पैदा करते थे। यहां हमारा प्रयोजन पूंजीवादकी वृद्धि और विकासका अितिहास देनेका नहीं है। अितना कहना बस है कि जब पूंजीवादका दिया हुआ वचन सच साबित नहीं हुआ, तो जल्दी ही यह महसूस कर लिया गया कि सम्पत्तिकी वृद्धि ही हमारा ध्येय नहीं हो सकता, परन्तु मनुष्योंके अुपयोगके लिअे सम्पत्ति पैदा की जानी चाहिये। यह कहा जा सकता है कि जब लोग जनसमुदायके विशाल हितमें सम्पत्तिके नियंत्रण और अुपयोगके लिअे अुपयुक्त तंत्रकी स्थापनाकी बात सोचने लगे, तब 'कल्याण-राज्य' के विचारका जन्म हुआ।

समाजवादका अुदय

जब अनुभवसे पाया गया कि पूंजीवादके मातहत अुत्पादनकी कोअी सुनिश्चित और सम्बद्ध योजना बनाना सम्भव नहीं है और साधन-सामग्रीके विकासके लिअे, जो स्वतंत्र अुद्योगपतियोंके हाथमें होती है, शीघ्र लाभ या अूंची आयके रूपमें कृत्रिम प्रोत्साहन देना जरूरी होता है, तो कुछ विचारकोंने — समाजवादियोंने — यह हिमायत की कि विशाल जनसमुदायके लाभ और कल्याणके लिअे सम्पत्तिका अुचित अुपयोग करनेके खातिर राज्यको अुत्पादनके साधनों पर अधिकार और नियंत्रण रखना चाहिये। समाजवादियोंका मत है कि वैयक्तिक अुद्योग-पद्धतिमें मजदूरों और जनताके हितोंकी अच्छी तरह रक्षा नहीं की जा सकती, क्योंकि अुसमें आर्थिक प्रवृत्तियां आम जनताकी सेवाके विचारसे नहीं चलाअी जातीं। वे चाहते हैं कि राज्य लोगोंको पूरा कामधन्धा देनेकी, दूसरे प्रकारकी सामाजिक सेवाओंका विकास करनेकी, वर्तमान विषमताओंको कम करनेकी और सब लोगोंको अुन्नतिके समान अवसर देनेका रास्ता तैयार करनेकी जिम्मेदारी अपने सिर ले। काम करने और जीविका कमानेका अधिकार (आयकी सुरक्षितता) प्रत्येक नागरिकका छीना न जा सके अैसा अधिकार है; अिस अधिकारकी राज्यको गारण्टी देनी चाहिये और वह मुट्ठीभर पूंजीपतियोंके जोड़-बाकीके हिसाब पर अवलंबित नहीं रहना चाहिये। राज्यका कर्तव्य है कि वह जनताके लिअे अिन विभिन्न कल्याण कार्योंकी व्यवस्था करे, और समाजवादियोंकी रायमें यह अुद्देश्य तब तक सिद्ध नहीं हो सकता, जब तक कि अुत्पादनकी व्यवस्था सरकारकी योजना और नियंत्रणके अनुसार नहीं होती। सारांश यह है कि वे चाहते हैं कि राज्य मानव-कल्याणकी वृद्धिके लिअे आर्थिक प्रवृत्तियोंको वांछनीय दिशामें योजनापूर्वक मोड़े और अुनका मार्गदर्शन करे।

मिश्र अर्थ-व्यवस्थाका मध्यम मार्ग

दूसरी अेक विचारसरणी भी है, जिसके समर्थक यह तो मानते हैं कि राज्य अनेक कल्याण कार्य अपने हाथमें ले, लेकिन अिस बातसे सहमत नहीं हैं या अिसे आवश्यक नहीं मानते कि अिस अुद्देश्यकी सिद्धिके लिअे अुत्पादनके साधनों पर राज्यको अधिकार और नियंत्रण रखना चाहिये और अुनके अुपयोगके लिअे कोअी योजना बनानी चाहिये। अिस विचारसरणीके अर्थशास्त्री कहते हैं कि आर्थिक प्रवृत्तियोंका अेकमात्र ध्येय संपत्तिका अुत्पादन ही नहीं होना चाहिये और पैदा की हुअी संपत्तिको समाजके अधिकसे अधिक कल्याणमें हाथ बंटाना चाहिये। चूंकि समाजके सुखका अर्थ है 'समाजके सारे व्यक्तियोंका सुख', अिसलिअे समाजका अधिकसे अधिक कल्याण तभी हो सकता है जब आर्थिक प्रवृत्तियां 'अधिकसे अधिक लोगोंको अधिकसे अधिक सुखी' बनायें। परंतु अिस विचारसरणीके अर्थशास्त्री संपत्ति-अुत्पादनकी व्यवस्थामें राज्यके सीधे हाथके प्रश्न पर समाजवादियोंसे भिन्न मत रखते हैं। अुनकी राय है कि खानगी साहसकी पद्धतिके संचालनमें किसी तरहका हस्तक्षेप किये बिना भी राज्य समाजका आर्थिक कल्याण साध सकता है। वे नहीं चाहते कि राज्य खानगी साहसके क्षेत्र पर अधिकार कर ले। जहां तक स्वतंत्र साहसकी पद्धतिमें होनेवाले अुत्पादनकी कार्यक्षमता और मिलनेवाले स्वतंत्र वातावरणकी प्रशंसाका संबंध है, ये अर्थशास्त्री 'प्राचीन' अर्थशास्त्रियोंके साथ अेकमत हैं। 'प्राचीन' अर्थशास्त्रियोंकी तरह ये भी आर्थिक नियमोंके भलीभांति काम करनेके लिअे मूल्य या कीमतके सिद्धान्तको और बाजारकी प्रक्रियाओंके महत्त्वको पवित्र वस्तु मानते हैं। अुन्हें यह

* सन् १८९० में जनरल बूथ द्वारा की गअी जांच: 'अिन दि डार्केस्ट अिंग्लैण्ड अेण्ड दि वे आअुट'।

www.vinoba.in

पसन्द नहीं कि राज्य कोअी अैसा कदम अुठाये जो अिनमें से किसी बातमें भारी गड़बड़ी पैदा कर दे और अिस पद्धतिके सामान्य कार्यमें कठिनाअी पैदा करे।

समाज-कल्याणकी विचारसरणी

अिस विचारसरणीके हिमायतियोंकी राय है कि खानगी अुद्योगोंको नष्ट किये बिना भी राज्य समाज-कल्याणके कदम अुठा सकता है। कर-पद्धतिके जरिये तथा सरकारी आयके अन्य जरियोंसे राज्य कल्याण-कार्य करनेके लिअे काफी पैसा प्राप्त कर सकता है। राज्य काफी प्रोत्साहन देकर, परोक्ष रूपमें खानगी अुद्योगोंको अुत्तेजन देकर (जैसे, ग्रान्ट देना, टेक्समें छूट देना वगैरा), किसी अुत्पादनको रोक कर या अुस पर नियंत्रण लगाकर विकास-कार्योंको विशेष क्षेत्रोंमें भी मोड़ सकता है। सार्वजनिक कार्योंकी सही नीति अपना कर और खानगी 'सेक्टर' को काफी मदद देकर कामधंधेका स्तर भी कायम रखा जा सकता या अूंचा अुठाया जा सकता है। अुनका यह कहना है कि कल्याण-राज्य योजना या नियंत्रणके अन्य कदम अुठाये बिना पूंजीवादी पद्धतिको कमसे कम प्रतिबंधोंके मातहत काम करनेकी अिजाजत देकर अपना अुद्देश्य सिद्ध कर सकता है।

(चालू)

(अंग्रेजीसे) **पी० श्रीनिवासाचारी**

ग्रामोद्योगोंकी अनिवार्यता

हिन्दुस्तानके गांवोंमें यह नहीं हो सकता कि बेकारी घटानेके लिअे आज तो ग्रामोद्योगोंका आयोजन किया जाय, पर फिर चार सालके बाद ग्रामोद्योग हटाकर दूसरे यंत्र लाये जायें। हिन्दुस्तानकी और दुनियाकी भी जनसंख्या कुछ न कुछ बढ़ रही है, पर हिन्दुस्तानकी जमीनका रकबा बढ़नेवाला नहीं है। अिस हालतमें हमें समझना ही होगा कि ग्रामोद्योगोंका अिस देशकी आर्थिक योजनामें स्थिर कार्य है। ग्रामोद्योगोंकी योजना तात्कालिक नहीं हो सकती; सड़कें बनाना आदि काम ही तात्कालिक हो सकते हैं।

जैसे अिस देशमें और दुनियामें भी खेती नहीं टल सकती है, वैसे कमसे कम हिन्दुस्तानमें ग्रामोद्योग नहीं टल सकते हैं। दुनियाको हर हालतमें खेती करनी ही पड़ेगी। ग्रामोद्योगोंके बारेमें यह बात हम नहीं कहते हैं। जिस देशमें जनसंख्या बहुत कम है, वहां पर दूसरे अुद्योग चल सकते हैं। जहां पर जमीन बहुत ज्यादा है, वहां पर खेतीमें यंत्रोंका अुपयोग किया जा सकता है। परन्तु हिन्दुस्तान जैसे देशमें, जहां जमीन कम है और जनसंख्या ज्यादा है, वहां पर खेतीमें बड़े-बड़े यंत्र नहीं आ सकते और अुद्योगोंमें भी सिर्फ ग्रामोद्योग ही चल सकते हैं। अिसलिअे केवल बेकारीके असुरके भयसे काम न किया जाय, बल्कि स्थायी योजनाके रूपमें काम किया जाय।

कोअी हमसे पूछ सकते हैं कि आप अिस तरह भेद क्यों करते हैं? हम भेद अिसलिअे करते हैं कि जहां पर देशव्यापी योजना बनानी हो तो वहां पर अगर कोअी निश्चित विचार न हो तो वह योजना नहीं चल सकती है। मैंने कह दिया है कि यह ठीक है कि बेकारी-निवारणके लिअे ग्रामोद्योगोंका आरंभ किया जा रहा है। लेकिन आज नहीं तो कल हमें यह सोचना होगा कि यहां पर जो आयोजन करना है, अुसमें ग्रामोद्योगोंको अेक महत्त्वपूर्ण विषय, जीवनका अेक अंश मानकर स्थान देना होगा।

हिन्दुस्तानके लिअे ग्रामोद्योग अत्यंत आवश्यक हैं। अिसका मतलब यह नहीं है कि औजारोंमें कोअी सुधार न किया जाय। सुधार तो जरूर करना चाहिये और हम भी पचीस सालसे अुसके पीछे लगे हुअे हैं। अनेक वर्षोंसे हमने चरखेके प्रयोग किये और अुनके परिणामस्वरूप अंबर चरखा निकला है। तो अैसे सुधरे हुअे औजार जरूर निकलने चाहिये। अुससे कोअी हानि नहीं होगी। लेकिन वह अंबर-चरखा आयेगा तो भी हमारी तकली और चरखा नहीं मिटेगा।

ग्रामोद्योग भी अकेले नहीं टिक सकते हैं। गांवके सब लोगोंको मिलकर ग्रामोद्योगके लिअे योजना करनी होगी। अगर गांवके लोग निश्चय करेंगे कि हमारे गांवमें बाहरका कपड़ा नहीं आ सकता है, तब वे योजना करके कपास बोनेसे कपड़ा बनाने तकका सारा काम गांवमें ही करेंगे। हम नहीं मानते कि अिस तरहकी योजनाके बिना ग्रामोद्योग फैल सकते हैं। कोअी व्यक्तिगत तौर पर ग्रामोद्योग कर ले, तो भी अुससे ग्रामव्यापी योजना नहीं हो सकती है। कोअी अेकाध मनुष्य अपनी मर्जीसे सूत कातकर अपना कपड़ा बना सकता है। लेकिन अुतनेसे ग्राम-योजना नहीं बन, सकती है। ग्राम-योजना बनानेके लिअे गांवकी अेक समिति बनानी चाहिये। लेकिन जब तक गांवमें विषमता रहेगी, तब तक गांवके लोग ग्राम-समितिके निर्णय नहीं मानेंगे। अिसलिअे जमीनका समान बंटवारा आवश्यक है। हमने अिसके लिअे कुछ सिद्धान्त भी बनाये हैं, जो आपके सामने रख रहे हैं। बिना ग्रामोद्योगोंके ग्रामका अुत्थान नहीं हो सकता है। सुव्यवस्थित ग्राम-योजनाके बिना ग्रामोद्योग नहीं चल सकते हैं। ग्रामकी सुव्यवस्थित योजना ग्राम-समिति बनाये बगैर नहीं हो सकती। और ग्राम-समितिको गांवमें तब तक मान्यता नहीं मिलेगी, जब तक ग्राममें जमीनका समान बंटवारा नहीं होगा। अिस तरह ग्रामोत्थानके साथ ग्रामोद्योग और जमीनका बंटवारा ये दो चीजें जुड़ी ही हैं; अुनको अलग नहीं किया जा सकता है।

विनोबा

[श्री विनोबाने ठीक ही कहा है कि ग्रामोद्योग हमारी अर्थ-व्यवस्थाका अनिवार्य और स्थायी अंग है, न कि सिर्फ आगंतुक कामचलाअू अंग, जैसा कि शायद हमारे पंचवर्षीय आयोजनकार मानते हैं।

अेक और बात मुझे यहां पर जोड़नी चाहिये। श्री विनोबाने यह भी ठीक कहा है कि "अेकाध मनुष्य अपनी मर्जीसे सूत कातकर अपना कपड़ा बना सकता है, लेकिन अुतनेसे ग्रामयोजना नहीं बन सकती हैं।" वैसे ही अेकाध गांवके लोग अपनी मर्जीसे यह काम करें, तो अुतनेसे भारतमें ग्रामोद्योग नहीं चलेंगे। सारे देशके खयालसे अिसकी योजना बनानी होगी। लोगोंमें ग्रामोद्योग और समानताकी विचारणाके आधार पर राज्य यदि अपना अर्थतंत्र और अुद्योग-व्यवस्था नहीं बनायेगा, तो ग्रामोद्योगोंकी हवा ही नहीं फैलेगी। अेकाध या थोड़े गांव भले ही अपवाद-रूप हों। और अुसी कारणसे बुनियादी शिक्षा भी आगे नहीं बढ़ेगी और अपनी व्यापक सामुदायिक शक्ति प्रगट नहीं कर सकेगी। 'राजा कालस्य कारणम्' न्यायको यहां पर भूलना नहीं चाहिये।

३१-१०-'५५ —म० प्र०]

विषय-सूची

		पृष्ठ
दकियानूसीपन और नौजवानोंका विद्रोह	मगनभाई देसाई	२८९
खेतिहर मजदूरोंके बारेमें गिरि-कमेटीकी रिपोर्ट	अेम० व्ही०	२९०
हरिजन-सेवक-संघ	वियोगी हरि	२९१
जातपांत और अस्पृश्यता	मगनभाई देसाई	२९२
साधुचरित जाजूजी	मगनभाई देसाई	२९३
हिन्दी परीक्षाओंका परिणाम	गिरिराजकिशोर	२९४
घानीकी शक्ति	वि०	२९४
कल्याण-राज्य बनाम सर्वोदय-राज्य—२	पी० श्रीनिवासाचारी	२९५
ग्रामोद्योगोंकी अनिवार्यता	विनोबा	२९६

www.vinoba.in